आदिनाथ हिन्दी-जैन-साहित्य-माला-पुष्प नं० ६३

महाबलकुमार

लेखक :—

नरेन्द्रसिंह जैन

प्रकाशक :—

पण्डित काशीनाथ जैन

× × ×

अध्यक्ष—आदिनाथ-हिन्दी-जैन-साहित्य-माला

× × ×

पो० बम्बोरा (उदयपुर-राजस्थान)

७, खेलात घोष लेन, कलकत्ता-६

सन् १६६५] [मूल्य ६३ पैसे

(सर्वाधिकार स्वाधीन)

साहित्य मालाके संरक्षक और सभासदों की
नामावली
संरक्षक—माननीय बाबू श्री श्रीपतसिंहजी दूगड़
आजीवन सभासद

श्रीयुत लक्ष्मीचन्दजी धन्नालालजी करणावट	कलकत्ता।
,, ,, छन्नालालजी सोहनलालजी करणावट,	कलकत्ता।
,, ,, पन्नालालजी विजयसिंहजी करणावट,	कलकत्ता।
,, ,, शाह देवराजजी बी० पारख,	बम्बई।
,, ,, धनराजजी उमरावसिंहजी वैद,	कलकत्ता।
,, ,, जयन्ती लालजी माधोलालजी मेहता,	कलकत्ता।
,, ,, महताबचन्दजी पूरणचन्दजी शामसुखा,	कलकत्ता।
,, ,, हिम्मतमलजी विजयसिंहजी सुराणा,	कलकत्ता।
,, ,, भँवरलालजी कमलसिंहजी रामपुरिया,	कलकत्ता।
,, ,, विनोदचन्दजी पुरुषोत्तम दासजी झवेरी,	अहमदाबाद।
,, ,, प्रसन्नचन्दजी परिचन्दजी बोथरा,	कलकत्ता।
,, ,, नथमलजी सम्पतलालजी रामपुरिया,	कलकत्ता।
,, ,, वीरेन्द्रसिंहजी अशोककुमार सिंहजी सिंघी	कलकत्ता।
,, ,, प्रतापचन्दजी कल्याणचन्दजी चोरड़िया,	कलकत्ता।
,, ,, लक्ष्मीचन्दजी फतेहचन्दजी कोचर,	कलकत्ता।
,, ,, रायसाहब मन्नालालजी दयाचन्दजी पारख,	कलकत्ता।
,, ,, भुरामलजी पूनमचन्दजी गुजरानी,	सिरसा।
,, ,, रतनलालजी ताराचन्दजी बोथरा,	बीकानेर।
,, ,, रावतमलजी भैरूंदानजी सुराणा,	बीकानेर।
,, ,, चान्दमलजी जवानमलजी मुणोत	शोलापुर
,, ,, जोमतराजजी जुवानमलजी पोरवाल	गुडाबालोतरा।
,, ,, लालचन्दजी हस्तीमलजी चौधरी,	गढ़सिवाणा।
,, ,, नेमीचन्दजी घेवरचन्दजी डाकलिया,	राजनांदगाँव।

जीयागंज (मुर्शिदाबाद) निवासी

श्रीयुत् बाबू श्रीपत सिंह जी दूगड़ का

संक्षिप्त परिचय

आपका जन्म सं० १९३८ में जीयागंज में हुआ था। आपके पिताजी का नाम छत्रपतसिंहजी और माताजीका नाम फुलकुमारी था। आपकी शिक्षा जीयागंजमें हुई। आपका विवाह संस्कार १२ वर्षकी आयुमें बीकानेर हुआ था। आपकी ३७ वर्षकी आयुमें आपके पिताजीका देहवासन हो गया। इसके बाद जमींदारीका कारोबार आप संचालन करने लगे।

सन १९४९ में आपने जीयागंजमें कॉलेज स्थापित करवाया, जिसमें आपने, निजी निवासस्थानका विशाल भवन था, जिसकी लागत लगभग २५००००) रुपयेकी है, उसे कालेजके लिये दिया है। एवं २५००००) रुपये नकद तथा १५००००) की जमींदारी भी कॉलेजके संचालनके लिए दी है एवं हॉस्टल-छात्रावास निर्माणके लिए भी १०२०००) रुपये 'गवर्नमेंट ओफ वेस्ट बंगाल' शिक्षा विभागके मन्त्री महोदयको प्रदान किये हैं। कॉलेजका नाम "श्रीपतसिंह कॉलेज" रखा गया है। इसके सिवा प्रसूती गृहके लिए सन् १९५७ में जीयागंजके London Misson Society's Hospital' में जैन महिलाओंके लिए रानी धन्ना कुमारी श्रीपतसिंह वार्डके नामसे लगभग ६५,०००) रु० प्रदानकर एक पृथक् प्रसुतीगृह बनवा दिया है। आपने कलकत्तेके जैन भवन में 'लक्ष्मीपतसिंह श्रीपतसिंह दूगड़" हॉल बनवानेमें तथा अपनी धर्म-पत्नी रानी धन्नाकुमारीके नामपर उपरोक्त हॉलके ऊपर एक नया पुस्तकालय भवन निर्माणके लिए १५०,०००)

दिए हैं। इसके अतिरिक्त अन्यान्य छोटे-मोटे जैन-मन्दिर एवं जैन संस्थाओंमें लगभग ४५००००) रु० दान किये हैं।

जीयागंजमें आपके संस्था-श्रीविमलनाथ भगवानका मन्दिर, पौषधशाला, आयंबिल, अक्षयनिधि खाता तथा धर्मशाला हैं। उनके निरन्तर निर्वाहके लिए आपने १०००००) बैंक में जमा करवा दिये हैं। इन संस्थाओंके संचालनका सारा कार्यभार 'कलकत्ता तुलापट्टी जैन बड़े मन्दिर' के संचालकोंके जिम्मे रखा गया है। तथा विमलनाथस्वामीके जिनालय के लिए ४५०००) रु० तुलापट्टीके बड़े मन्दिर में जमा कराए हैं।

अभी हाल ही में आपने १०००००) रु० श्री नरेन्द्रसिंहजी सिंघी तथा श्री परिचन्दजी बोथराकी निगरानीमें दिए हैं। जिसके ब्याज से जीयागंज के मन्दिरों का जीर्णोद्धारका कार्य चलता रहेगा।

इस प्रकार आपने धार्मिक कार्यों में बड़े उत्साह से दान दिया है और देते रहते हैं। इस समय आपकी उम्र ८४ वर्षकी है। अस्तु! शासनदेव आपको दीर्घजीवी करें। आपके चित्तमें सदैव धर्मकी सद्भावना उत्तरोत्तर बढ़ती रहे यही हमारी आन्तरिक अभिलाषा है।

१—१०—१९६५
७, खेलात घोष लेन
कलकत्ता — ६

निवेदक :-
नरेन्द्र सिंह जैन

नवीन आजीवन सदस्य

हमें यह उल्लेख करते हुए अपार हर्ष है कि बम्बई निवासी, परम माननीय, साहित्य-प्रेमी, धर्मनिष्ठ, समाज सेवी, शाह देवराज जी बी० पारख ने ३५१) तीन सौ एकावन रुपये प्रदान कर हमारी "आदिनाथ-हिन्दी-जैन-साहित्य-माला" के आजीवन सदस्य बननेकी सद्भावना प्रकट कर हमें अतीव प्रोत्साहित किया है। एतदर्थ सादर सनेह धन्यवाद।

आशा है हमारे अन्यान्य धर्म प्रेमी उक्त बाबू साहब के साहित्यानुरागका अनुकरण कर "साहित्य-माला" के आजीवन सदस्य बनने की कृपा कर जैन साहित्य प्रचार कार्य में सहयोग देंगे।

२-१०-१९६५
७, खेलात घोष लेन
कलकत्ता-६

भवदीय
नरेन्द्रसिंह जैन

आजीवन सदस्य बनिये

यदि आप हमारी "आदिनाथ हिन्दी जैन-साहित्य माला" में ३५१) तीन सौ एकावन रुपये प्रदान कर आजीवन सदस्य बनेंगे तो माला की सभी पुस्तकें जिनका मूल्य लगभग १२०) एक सौ बीस रुपये हैं, वह सभी पुस्तकें आपको भेंट दी जायेंगी एवं भविष्य में प्रकाशित होनेवाली सभी पुस्तकें यानी प्रति वर्ष ढ़ाई सौ या तीन सौ पृष्ठकी पुस्तकें प्रकाशित होंगी, वह आपको जीवन पर्यन्त भेंट मिलती रहेंगी।

इसके अतिरिक्त यदि आपके पास हमारी पहलेकी सभी पुस्तकें हों और उनको नहीं लेना चाहें तो २५१) दो सौ एकावन रुपये प्रदान कर आजीवन सदस्य बन सकेंगे। नियमानुसार प्रकाशित होने वाली पुस्तकें आपको निरन्तर भेंट मिलती रहेंगी एवं छोटी-मोटी सभी पुस्तकों की सदस्य-श्रेणी की सूचि में आपका शुभ नाम भी छपता रहेगा। यदि आप बाहर गाँव रहते हों तो पुस्तक भेजने का डाकखर्च आपके जिम्मे रहेगा, यानी डाकखर्च की वी०पी० आपके नाम की जायगी।

१-१०-१९६५
७ खेलात घोष लेन
कलकत्ता-६

आपका :—
नरेन्द्र सिंह जैन

एक नजर इधर भी कीजिये

इधर-उधर की खराब किस्से-कहानियों की पुस्तकें न पढ़कर शान्ति के समय हमारी प्रकाशित, उपदेश प्रद, धार्मिक, सरल-सुन्दर सचित्र पुस्तकें मंगवाकर अवश्य पढ़िये। इन पुस्तकों के पढ़ने से एवं मनन करने से आपकी आत्मा विकसित हो उठे। हमारी किसी भी एक पुस्तक को पढ़ना आरम्भ करने के बाद उसे छोड़ने की इच्छा न होगी। हम दावे के साथ लिखते हैं कि जैन-समाज के साहित्य में हमारी पुस्तकों के अनुसार ऐसी अन्य पुस्तकें कदापि प्राप्त न होंगी। यदि आपको विश्वास न हो तो पहले एक पुस्तक को मंगवा कर पढ़िये। यदि पसन्द आये तो हमारी अन्यान्य सभी पुस्तकें मंगवा कर अवश्य ही पढ़िये, और अपने इष्ट-मित्रों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित कीजिये। पढ़ने पढ़ाने से ज्ञान-दान का अपूर्व लाभ प्राप्त होता है।

आज ही आर्डर दीजिये

पुस्तकें मिलने का पता :- **पण्डित काशीनाथ जैन**

मु० पो० बम्बोरा (उदयपुर-राजस्थान)

जैन साहित्य का अनमोल सचित्र ग्रन्थ-रत्न

आदिनाथ-चरित्र

हिन्दी जैन-साहित्य में आदिनाथ-चरित्र के समान अपूर्व ग्रन्थ रत्न अब तक कहीं नहीं छपा। इसमें आदिनाथ भगवान के तेरह भवों का सम्पूर्ण चरित्र बड़ी ही सरल, सरस, सुन्दर और सुमधुर भाषा में उपन्यास के ढंग पर लिखा गया है। जो प्रत्येक नर-नारी और बालक-बालिकाओं के पढ़ने, सुनने और समझने योग्य है। यह ग्रन्थ ऐसी सुन्दर शैली पर लिखा गया है, कि एकबार पढ़ना आरम्भ करने के बाद फिर बिना पूरा पढ़े छोड़ने की इच्छा ही नहीं होती। उत्तमोत्तम भाव पूर्ण सतरह चित्र लगाकर इस ग्रन्थ रत्न की शोभा सौ-गुनी बढ़ा दी गयो है। जिन्हें देखने पर श्री आदिनाथ भगवान का सारा चरित्र बायस्कोप की तरह आँख के सामने घूमने लगता है। इतना होने पर भी इस अनुपम, सर्वांगसुन्दर बहुमूल्य ग्रन्थ रत्न की कीमत सुनहरी रेशमी जिल्द का केवल ९) रुपये रखा गया है। हम अपने समस्त जैन बन्धुओं से अनुरोध करते हैं कि वे हजार कामों में किफायत कर इस अलभ्य ग्रन्थ-रत्न को मंगवाकर जरूर पढें। डाक खर्च १॥)।

मिलने का पता—पण्डित काशीनाथ जैन

मु० पो० बम्बोरा (उदयपुर-राजस्थान)

महाबलकुमार

जैसा संग वैसा रंग

इस विश्वमें अनादिकालसे अनन्तानन्त आत्माएँ चतुर्गतिमें परिभ्रमण कर रही हैं। भवभ्रमणकी लीलाका भंजन करनेवाला केवल धर्म ही है और इस धर्मकी आराधना मानवभव के सिवाय अन्य किसी भवमें नहीं हो सकती, क्योंकि नारकीय आत्माएँ नारकी में परमाधामी जन्य असह्य यातनाएँ भोगती रहती हैं। उस गतिमें एक क्षण भी शान्ति, सुख या समाधि नहीं हो सकती। तिर्यंच अर्थात् जीव-जन्तु बेचारे अज्ञान और विवेक-हीन हैं, जबकि देवगतिमें देवता-आमोद-प्रमोद, भोग-विलास और विषय-वासना में निमग्न हो रहे

हैं। इस प्रकार यदि ज्ञान या विवेक किसी में हो सकता है तो वह केवल मनुष्य गति में ही है। मानव यदि चाहे तो सात रज्जा उर्ध्व गमन कर सकता है और सात रज्जा नीचे भी जा सकता है।

पुण्ययोग से प्राप्त हुए देव-दुर्लभ मानव-भवको पाकर भी विवेकको भूलकर विषयोंमें झूलते हुए, दुर्व्यसनोंमें इस अमूल्य अवसरको गवाँकर दुर्गतिका अतिथि बन यह आत्मा अनन्त दुःखसागरमें निमग्न हो रहा है; किन्तु व्यसनों में जीवन किस प्रकार नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है, वह हमें महाबलकुमार के जीवन की ओर दृष्टिपात् करने से ज्ञात हो सकेगा।

भू-मण्डलके भूषण-समान इस भरत क्षेत्र में ऋद्धि-समृद्धि और रमणीयताके कारण अलकापुरी की शोभाको भी लज्जित कर सकने वाला श्रीपुर नामका एक महानगर था। जहाँ "यथा नामा तथागुणाः" के अनुसार यथार्थ नामधारी मानमर्दन राजा राज्य करते थे। इसी

श्रीपुरमें महाबलवान् महाबलकुमार के नामसे अलंकृत एक कुलपुत्र निवास करता था। दैव योग से महाबलकुमार के माता-पिता बाल्यावस्थामें ही उसे छोड़कर परलोकधामको सिधार गये थे। इस कारण उसकी देखरेख करनेवाला इस जगत्में कोई नहीं रह गया था; अतएव वह स्वच्छंद बनकर निरंकुश विचरने लगा और उसे अनेक दुर्जन विलासी मित्रोंका समागम हो गया। अतएव "जैसा संग वैसा रंग" की उक्तिके अनुसार महबलकुमारका निरन्तर पतन होता गया। आधुनिक भाषामें यदि कहा जाय तो वह चार सौ बीस बन गया। इस प्रकार व्यसनोंमें फँसकर जहाँ-तहाँ भटकते हुए उसे जुए (द्यूत) का व्यसन लग गया, किन्तु व्यसन एक ऐसी प्रवृत्ति है जिसकी आदत पड़ जाने पर छोड़ना अत्यन्त कठिन हो जाता है। जिस जुएके प्रभावसे नलराजाको राज-पाट छोड़कर वनवास भोगना पड़ा और जिसके प्रतापसे पाँचो पाँडव जैसे महाबलिष्ठ

पुरुषों को भी बारह-बारह वर्षों तक वन-वन भटकना पड़ा, यही नहीं और भी अनेक बड़े-बड़े राजा-महाराजा भी जिसके संसर्ग से नष्ट-भ्रष्ट हो गये; उनकी तुलनामें साधारण मानव की तो गणना ही क्या ?

किन्तु जुएका व्यसन अपने साथ और भी कई व्यसनोंको बुला लेता है। बुरे व्यसन के आरम्भ में हमें उसके दुष्परिणाम की कल्पना तक नहीं होती। वह सोचता है—अरे इसमें क्या दोष है ? "यह तो एक खेल मात्र ही है। आनन्दका एक साधन है।" इस प्रकार कहते हुए इसकी उपेक्षा कर दी जाती है, किन्तु जब यह जमकर घर कर जाता है, स्वभावमें आ जाता है, तब आत्माको बहुत ही कष्टप्रद स्थिति में फँसा देता है। अफीमचीको अफीम का व्यसन लग जाने के बाद अफीम न मिलने पर उसके हाथ पैर ढीले पड़ जाते हैं। मदिरा पान करनेवाले को मद्यके बिना काम नहीं चल सकता। भले ही

वह सुरापान करके राजमार्ग पर पशु की तरह गटर या नालीमें लोटता रहे और उसके मुँह में कुत्ते मूतते रहें। इस प्रकार भले ही वह अपनी शान-भान भी खो बैठे, यही नहीं वरन् पागलसे भी बुरी दशामें पहुँच जाय। बीड़ी-सिगरेटके व्यसनीसे ये चीजें किसी भी प्रकार नहीं छूटतीं। भले ही इससे उसकी छाती जलती रहे, वह जहाँ-तहाँ खाँसता या थूंकता रहे, मुँहसे दुर्गन्ध आती रहे, और कैंसर जैसी भयंकर व्याधिमें फँसते हुए पानीकी तरह पैसा खर्च होता रहे। यहाँ तक कि टट्टी-पेशाब या मल-मूत्रका विसर्जन भी बिना बीड़ीके न हो सके; सोते समय या सवेरे उठते ही अथवा चलते-फिरते 'नवकार मंत्र' गिनने की तरह ये लोग बीड़ीका जाप जपते हों, इस प्रकार उसके दास बन जाते हैं।

जीवनमें जुए का व्यसन लग जाने पर वह किसी प्रकार भी नहीं छूटता। खेलते-खेलते पैसा समाप्त हो जानेपर चोरी करनेकी

भावना होती है और जहाँ-तहाँ चोरी करके पराया धन हरण करके भी वह जुआ खेलना नहीं छोड़ता। अपने प्राण या जीवनको संकट में डालकर तथा अनेक स्थानों में भटकते हुए भी वह किसी प्रकार शान्ति नहीं पा सकता। कितने ही मनुष्य पर्व या धर्म दिवसों में ही विशेष रूपसे जुआ खेलते हैं। (खासकर दिवाली पर तो जुआ खेलना भाग्यकी परीक्षा ही माना जाता है।) वैसे तो जीवनमें अनेक प्रकारके प्रपंच एवं आधि-व्याधि तथा उपाधियोंमें फँसकर अथवा भोग-विलासमें हम धर्मकी आराधना कर ही नहीं सकते; इसीलिए हमारे सद्भाग्यसे धर्माराधना करनेके लिए विशेष पर्व आते रहते हैं। अतएव ऐसे पवित्र दिनों में भी यदि हम धर्मकी साधनाको त्यागकर अपने कर्त्तव्य से चूकते हुए पाप में प्रवृत्त होकर अपने आपको खुद ही भवसागरके अधबीच में डुबा देते हैं। यह अत्यन्त ही शोचनीय अवस्था है। अपने हाथों ही अपने

पैरों में कुल्हाड़ी मारनेकी तरह हम यह मूर्खता पूर्ण का कार्य कर रहे हैं और इसके परिणाम स्वरूप जब तब पीड़ा भोगते हुए 'हाय-हाय' करने लगते हैं; घबराते हैं और पीछेसे पछताते हैं, किंतु पीछे पछतानेसे क्या हो सकता है? "रँडापा आजाने पर समझदारी दिखाने से" क्या लाभ हो सकता है? इसीलिए अनन्त ज्ञानी हमारे सम्मुख ज्ञानका प्रकाश फैलाते हैं। सर्चलाइटसे सामने तेज रोशनी डालते हैं कि 'हे महानुभावो! यह आत्मा अनंत दुःखकी गति में न पड़ जाय, इसलिए पहले ही जागने की आवश्यकता है; इस पर विचार करना परम आवश्यक है; क्योंकि विचार करनेका यदि कोई केन्द्रस्थान हो सकता है तो वह केवल यह मानव जीवन ही है। अतः ऐसे अमूल्य मानव देहको पाकर भी धर्म-कर्मको भूलने और पापमें प्रवृत्त होने तथा व्यसनादिमें जीवन बिता देनेसे सचमुच ही हम इस उच्च जीवनका सत्यानाश कर रहे हैं। इसीलिए अनुभवी

ज्ञानी पुरुषों ने कहा है कि :—

'द्यूतं च मांसं च सुरा च वेश्या, पापर्द्धि चोरी परदार सेवा।
एतानि सप्त व्यसनानि लोके, घोरातिघोरं नरकं नयन्ति॥'

अर्थात्—जुआ, मांस, मदिरा, वेश्या, शिकार, चोरी और पर स्त्री गमन ये सात व्यसन आत्माको महाभयंकर एवं घोरातिघोर नरकमें खींच लेजाते हैं। इसलिए समझो और सावधान होकर व्यसनोंसे दूर रहो। जुआरी प्रथमतः छोटे-छोटे खेल बिना पैसेके खेलता है; और धीरे-धीरे पैसेसे रुपये तक पहुँच जाता है। इस प्रकार क्रमशः कुछ आगे बढ़कर "हारा हुआ जुआरी दूना दाव लगाता है" की कहावतको चरितार्थ करता है; क्योंकि आशा ऐसी ही वस्तु है कि जिसके सहारे मनुष्य यही समझता है कि 'अबके नहीं तो इसबार' जरूर ही मेरी जीत होगी।

इस प्रकार वह आशाके शिखर पर चढ़कर दुःखकी खाई में गिर जाता है। यहाँ तक कि घरके खपरैल नलिये भी बेच देनेका अवसर भी

आ जाता है, पत्नीके आभूषण बेच देने का अवसर भी आ जाता है और अन्तमें शरीर पर पहने हुए कपड़े से ही बाहर निकल जाना पड़ता है। जंगल का मार्ग पकड़ना पड़ता है। तब जाकर आँखें खुलती हैं कि, 'हाय! यदि मैं जूआ न खेला होता तो आज मेरी यह दुर्गति नहीं होती। मैने बड़ी भूल की' परन्तु 'अब पछताये होत क्या'?

एकके पापसे

महाबलकुमार आज बेढँगी स्थितिमें पहुँच गया है। जुए में वह अपने पिता की लक्ष्मी को नष्ट कर चुका है। अब उसके पास फूटी कौड़ी भी नहीं रहा। इसी कारण जुआरी लोग भी अब उसके साथ जुआ नहीं खेलते, किंतु महाबल इस दशामें भी जुआ खेले बिना नहीं रह सकता। तब क्या हो सकता है? इससे उसकी बुद्धि भ्रष्ट होती है और वह जैसे भी हो पैसा प्राप्त कर जुआ खेलना

आवश्यक मान लेता है। इस भावनाके कारण उसके मनमें चोरी रूपी महापाप करनेका बीजारोपण होता है; और वह चोरी करनेको प्रवृत्त हो जाता है । व्यसन आत्माको कब-कहाँ पहुँचा देगा, यह नहीं कहा जा सकता। जुएने महाबलकुमारके घर-द्वार छुड़ा धन-दौलत और जायदाद् नष्ट करा दी और सरे बाजार दिन-दहाड़े इज्जत आबरू नीलाम करवाकर उसे नीचे देखनेका अवसर ला दिया। वह नीचा सिर करके काला मुँह लियेजहाँ-तहाँ धक्के खाता है। इस प्रकार जुएके व्यसनने महाबलको बेहाल और कंगाल बना दिया।

किन्तु महाबल में कुछ योग्यता भी थी। अतएव यह सोचता है कि विवश होकर मुझे चोरी करनी पड़ रही है, किन्तु चोरी भी मैं ऐसे व्यक्ति के यहाँ करूँ, जिससे कि उसे कोई खास हानि न पहुँचे। इस प्रकार विचार करके वह अँधेरी रात में चोरी का अधम कृत्य करने के लिए छिपे रूप में चल पड़ता है।

उसी श्रीपुर नगरी में श्रीदत्त नामका एक महान् धनवान्-धनिक निवास करता है। अतः महाबलने सोचा कि उसके यहाँ चोरी करने से विशष हानि नहीं होगी और मेरा काम भी बन जायगा; क्योंकि सेठ लाखों की सम्पत्ति का स्वामी है। उसमें से थोड़ा सा द्रव्य ले भी लिया जाय, तो इससे सेठको विशेष दुःख न होगा। जैसे कि कन-खजूरे का यदि एक पाँव टूट भी जाय तो उसका काम नहीं रुकने पाता। इस प्रकार विचार करके घोर अंधकारमयी रात्रिमें, जब कि समस्त प्रजाजन सुख की निद्रा में निमग्न हो रहे हैं 'कोई किसी को देख नहीं सकता। ऐसे समयमें महाबल सीधा सेठ के आँगन में जा पहुँचता है। वहाँ जाते ही उसने द्वार के छिद्र में से देखा कि कमरे में दीपक जल रहा है। उसके उज्वल प्रकाश में उसे दिग्मूढ़ कर देनेवाला एक दृश्य दिखाई दिया। वह चुपचाप वहीं खड़ा रह गया। वातावरण पूर्ण शान्त

था। कहावत है कि रात्रि के समय दीवारों के भी कान होते हैं। अतः महाबलकुमार ने वहाँ जो विचित्र घटना देखी, उससे उसका अंतः-करण एकदम विचलित हो उठा।

बात यह थी कि श्रीदत्त सेठ अपने एकमात्र लाड़ले पुत्र को भृकुटी चढ़ाकर धमका रहा था और लड़का भी चुप-चाप खिन्न मन से सब सुन रहा था। सेठ ने पुत्र को सम्बोधन करते हुए कहा :—"अरे! आज हिसाब क्यों नहीं मिलता? जा, जमाखर्च का मेल ठीक से मिला। कई घंटे बीत जानेपर भी मेल नहीं मिले यह कैसे हो सकता है? हिसाब में भूल थी केवल एक ही पैसे की, किन्तु सेठ समझता था कि आज यदि एक पैसे की भूल है तो कल रुपये की और आगे चलकर लाखों की भूल होने पर तो दिवाला ही निकल सकता है। सेठ दीर्घदृष्टा था। वह छोटी-सी वस्तुको भी जाने देना नहीं चाहता था। वह समझता था कि छोटी भूल से

ही महान अनर्थ होता है। नावमें यदि सहज ही छेद हो जाय तो बीच धारमें उसकी क्या गति हो सकती है? हजारों मन दूध की खीर में यदि जरा सा भी संखिया पड़ जाय तो उसे खाने वाले सभी "ॐ फट् स्वाहा" हो जाते हैं। इसलिए छोटी सी भूल भी नहीं चल सकती। और इसी से सेठ दिया जलाकर देर तक जागते हुए अपने प्रिय पुत्र को आधी रात में धमका रहा था।

महाबल तो यह दृश्य देखते ही माघमास की ठंड में एकदम जम जाने वाले घी की तरह जहाँ का तहाँ शिथिल हो गया। वह एकदम स्तब्ध रह गया। उसने देखा कि जब एक पैसे की भूल रहने पर सेठ का मिजाज इतना बिगड़ रहा है कि बेचारे लड़के का तैल ही निकाल देना चाहता है। तब यदि इसके यहाँ हजार-दस हजार की चोरी की जाय तो इस बेचारे को तो बिना मौत मर जाना पड़ेगा। इसलिए मुझे यहाँ चोरी नहीं

करनी चाहिए। इस प्रकार विचार करके वह वहाँ से राजपुरोहित के द्वार पर पहुँचा। राजा का पुरोहित होने से उसके पास भी विपुल द्रव्य होना चाहिए। यही सोचकर वह यहाँ आया था, किन्तु यहाँ के दृश्य को देख कर तो उसके होश-हवास ही उड़ गये। अर्थात् वहाँ आते ही महाबल ने बाहर से भीतर झाँक कर देखा तो छोटा-सा दीपक टिमटिमाता दिखाई दिया, और राजपुरोहित सुखपूर्वक सो रहे थे। अचानक एक चुहिया पुरोहित जी के पेटपर से निकल गई, और इससे अर्धजाग्रत अवस्था में पुरोहित के मुख से "मह्यं देहि, स्वस्ति तुभ्यं" (मुझे दे, तेरा कल्याण होगा) ये शब्द निकल पड़े। महाबल ने ये शब्द अपने कानों से सुने और वह विचार करने लगा कि, ये पुरोहितजी तो रात में निद्रा में भी 'लाओ-लाओ' का जाप जप रहे हैं। अतः मैं यदि इनके यहाँ चोरी करूँ; तो इन बेचारेका चित्तही उलट जायगा। इस

प्रकार विचार करके वह वहाँ से भी चल दिया और नगर की सुप्रसिद्ध कामसेना नाम की वेश्या के आँगन में जा खड़ा हुआ। उसने सोचा कि जिसके पास अटूट लक्ष्मी है, और राजा-महाराजा तथा बड़े-बड़े श्रीमान् जिसपर मोहित होकर हजारों रुपये सहज ही भेंट कर देते हैं, उसके यहाँ किस बात की कमी हो सकती है? यही सोच कर वह वहाँ आया था। अतः उसने बाहर से नजर दौड़ा कर बड़े ध्यान से देखा; तो यहाँ भी उसे एक विचित्र घटना दिखाई दी। बात यों थी कि वह प्रसिद्ध रूपवती, नव यौवना वेश्या एक कोढ़ी को अपने हाथों से स्नान करा रही थी। साबुन लगा कर उसके शरीर को मलमल कर गर्म जल से धो रही थी। उस कोढ़ी के शरीर में से भयंकर दुर्गन्ध चारों तरफ फैल रही थी। अतएव महाबल ने विचार किया कि इस प्रकार रूप यौवन-सम्पन्न एवं वैभव-शालिनी वेश्या इस कोढ़ी को मल-मल कर

क्यों स्नान करा रही है? सचमुच ही यह थोड़े से द्रव्य के लोभ से यह इस महारोगी की सेवा कर रही है। यदि ऐसी वारांगना-वेश्या के यहाँ चोरी की, तो इस बेचारी की तो छाती ही फट जायगी। अतः अन्त में महाबल निराश होकर चोरी किये बिना ही वापस लौट आया और उसने निर्णय किया कि अब जहाँ तहाँ भटकने की आवश्यकता नहीं, बल्कि जहाँ अटूट लक्ष्मी का भण्डार भरा हुआ है, उस राजमहल में ही क्यों न चोरी की जाय? राजा के खजाने में तो किसी प्रकार की कमी नहीं हो सकेगी।

भविष्य वाणी

राजा-रानी निद्रा देवीकी गोदमें सो रहे थे। यह देखकर महाबलके आनन्दकी सीमा न रही। उसने देखा बहुत अच्छा अवसर प्राप्त हुआ है। आज कल्पवृक्ष और चिन्तामणि रत्नके समान यह राजप्रासाद सुलभ हो गया है। पापी लोग पाप के साधन अनायास प्राप्त

होने से नाचने लगते हैं, किन्तु उन आत्माओं को पता नहीं कि "हँसते बाँधे कर्म जो, रोते भी नहीं छूटेंगे !" फिर सिर कूटने से भी कुछ नहीं होगा। किन्तु इस प्रकारका भान इस समय महाबलकुमारको कहाँसे हो सकता था ? उसके आनन्दको सीमा ही नहीं थी। आसपास दृष्टि डालनेपर जगमगाते बहुमूल्य अलंकारोंसे परिपूर्ण रत्नोंकी एक सन्दूक रखी दिखाईदी। उसे उठाकर जैसेही वह चलनेकी तैयारीमें था कि ठीक उसी समय एक ऐसी विचित्र घटना घटित हुई कि जिसे देखकर महाबल एकदम आश्चर्य सागरमेंही डूब गया।

बात यह थी कि महलके बाहरी दर्वाजेके छिद्र में से प्रवेश कर एक महा भयंकर सर्प आता दिखाई दिया। वह लपक कर सीधा रानी के पास पहुँचा और रानी की नीचे-लटकती हुई वेणी-चोंटीके सहारे पलंग पर चढ़कर उसे काटने के बाद् तत्काल ही वापस चला गया। महाबल कुमारने यह दृश्य अपनी

आँखोंसे देखा तो वह एकदम आश्चर्य सागरमें डूबगया। उसने विचार कियाकि इसमें अवश्यही कोई रहस्यपूर्ण गर्भित होना चाहिए। अतएव वह रत्नोंकी पेटी वहीं छोड़कर सर्पके पीछे दौड़ा, किन्तु सर्पतो सर-सराता हुआ तत्काल नीचे उतर गया। फिर भी महाबलने उसका पीछा किया, किन्तु उसी समय फिर एक दूसरी आश्चर्यजनक घटना घटित हुई। उसे देखकर तो महाबलके आश्चर्य की सीमा ही नहीं रही। अर्थात् वह सर्प अपना रूप छोड़कर अत्यन्त पुष्टकाय बैल बन गया, किन्तु महाबल शांत भावसे यह सब देखहीरहा था कि, इतनेमें उस बैलने आगे बढ़कर राजप्रासादके द्वारपालको सींगोंके द्वारा उछालकर भूमिपर पछाड़ते हुए मृत्युके मुखमें पहुँचा दिया। यह अनर्थ महाबलसे नहीं देखा गया और उसने बैलकी पूँछ पकड़कर पूछा—"अरे! तू कौन है? और तूने पहले सर्प और फिर बैल बनकर क्यों बेचारी रानी और द्वार-

पालके प्राण लेलिये ?" यह सुनते ही बैलने मनुष्यकी वाणीमें उत्तर दियाकि :—"हे कुमार ! मैं नागकुमार जातिका देव हूँ। यह पटरानी और द्वारपाल दोनों ही मेरे पूर्वभव के शत्रु थे। अतएव अपने वैरका बदला लेने कोही मैं यहाँ आया था और अपना काम पूरा करके मैं वापस अपने घर जाता हूँ।

इसपरसे सिद्ध होता है कि एक भवमें दूसरेके साथ किये हुए वैर-विरोध जन्मान्तरमें भी उसका दुष्परिणाम भोगनेको बाध्य करते हैं अर्थात् शत्रु जन्म-जन्मान्तरमें भी वैरका बदला लिये बिना नहीं छोड़ता। इसलिए किसीके साथ वैर-विरोध भूलकर भी नहीं करना चाहिए ; क्योंकि किसीकी निन्दा, या अहित अथवा विरोध किंवा ईर्ष्या या अशुभ चिन्तन करनेसे हमारा कभी श्रेय नहीं हो सकता। उलटा घोर पाप-बन्धन ही होता है। भले ही आज हम सबल हों या हमारी सत्ता चलनेसे बेचारे निर्बलोंका संहार हो रहा हो;

हम उन्हें त्रास देते या अन्याय की चक्कीमें पीस डालते हों, किन्तु यह भी एक प्रकारकी दानवता ही है। हमारी ये पाशवी वृत्तियाँ और प्रवृत्तियाँ हमें दुर्गतिके गर्तमें गिराये बिना नहीं रह सकतीं। पापकर्मों के कडुए फल हमें ही भोगने पड़ेंगे। अतएव आत्माको पहलेसे ही समझानेकी खास आवश्यकता है।"

बैलके मुखसे इस प्रकारके वचन सुनकर महाबलको विशेष पूछनेकी इच्छा हुई। अतएव उसने बैलरूपी देवसे पूछा—"हे देव! कहो मेरी मृत्यु कब होगी?"

यह सुनकर देवने कहा, "भाई! तू किस लिए मुझसे ऐसी बात पूछता है?" किन्तु जब महाबलने बहुत ही आग्रह किया; तब देव ने कहाकि—:"हे महाबल! आजसे छह महिने बाद इसी नगरके मध्यमें खड़े हुए वटवृक्षकी शाखासे लटक कर तेरी मृत्यु होगी।"

देवताकी बात सुनकर पूरा विश्वास करनेके लिए महाबलने कहाः—"आपकी बात यथार्थ

हो सकती है; किन्तु मेरे विश्वासके लिए अन्य कोई चिह्न भी बतलाइये; जिससेकि मुझे पूर्ण विश्वास हो सके कि आपका कथन सोलहों आने सत्य है।

"महाबल! देवताके वचन मिथ्या नहीं होते। फिर भी यदि तुझे विश्वास ही करना हो तो कल मध्याह्न में राजमहलके शिखरपर काम करने वाला राज (सिलावट) गिरकर मर जायगा। यदि यह घटना सत्य सिद्ध हुई, तब तो तुझे विश्वास हो जायगा नँ ?" देवताने स्पष्ट समाधान किया किन्तु मृत्यु की बात सुनते ही बड़े-बड़े बलवान् लौहपुरुषोंके भी हाथ-पाँव ढीले पड़ जाते हैं। अर्थात् महान् शक्तिशालियों को भी भयभीत करनेवाली यदि कोई चिन्ता हो सकती है तो उस मृत्यु का ही भय है।

महाबलने बैलकी पूँछको छोड़ दिया और तत्काल वह देव भी अदृश्य हो गया।

———

वटवृक्ष की बलिहारी

समय जाते देर नहीं लगी। दूसरे ही दिन मध्याह्नमें बारहबजे राजमहलके शिखरसे गिरकर "राज" की मृत्यु हो गई। अचानक उस राज-मजदूरको महलके शिखर परसे गिरकर मरते देख महन् बलवान् महाबलकुमार भी हिम्मत हार गया। वह अत्यन्त दीन-हीन और निष्क्रिय-शिथिल हो गया। अब उसके नेत्रोंके सम्मुख प्रतिक्षण मृत्यु चलती-फिरती दिखाई देने लगी। मानों वह अभी ही दबोच लेगी। इसी चिन्ताके कारण उसके लिए खाना-पीना और चलना-फिरना तक असह्य हो गया। उसकी दृष्टिके सम्मुख तो महर्षियों के कथनानुसार ये टकसाली वचन बारबार उपस्थित होने लगे :—

मृत्यो र्बिभ्यति ते बालाः येस्युः सुकृत वर्जिताः।
पुण्यवन्तो नरा सर्वे, मृत्युं प्रियतमा तिथिम्॥

अर्थात्—मृत्युसे वे ही लोग हमेशा भय-

भीत होते हैं जिनका जीवन निरन्तर धर्म-कर्म से रहित होता है, किन्तु जिन्होंने सदाचार, सत्यनीति और अहिंसा धर्मकी आराधनामें जीवन बिताया है, ऐसे पुण्यवान पुरुषोंको मृत्युका भय नाम को भी नहीं होता। वरन् वे मृत्युको अपना प्रिय अतिथि (मेहमान) समझ कर उसको स्वागत ही करते हैं।

अब तो महाबल मृत्युके विचारमें ही निमग्न रहकर दिन-रात यही सोचता रहताकि मैं कहाँ जाऊँ और क्या करूँ? क्या मैं इस नगर से दूर-बहुत दूर पलायन कर जाऊँ? क्योंकि यदि मैं इस नगरमें रहा, तो इसी वृक्षकी शाखासे लटकनेका अवसर आ सकता है।

अतः महाबलने जंगलका रास्ता पकड़ा। आगे जाने पर एक महात्मा तप करते हुए दिखाई दिये। महाबलने उनके पास पहुँच कर तापस की दीक्षा ग्रहण की और संन्यासी बनकर उग्र तप करते हुए जीवनको उज्ज्वल बनानेका प्रयत्न आरम्भ कर दिया।

उसी अवधि में एक दिन एक चोरने राजमहल में चोरी की और बहुमूल्य आभूषणों की सन्दूक उठाकर वह जाही रहा था कि भाग्यवश चोरी होनेकी खबर तत्काल राज-पुरुषोंको लग गई और वे चोरके पीछे पड़ गये। वह दोनों हाथोंकी मुट्ठी बाँधकर दौड़ता हुआ जा रहा था; क्योंकि उसे पकड़े जानेका भय था। अतः अपने प्राण बचानेके लिए व्याकुल होता हुआ वह भागकर ध्यानस्थ महाबलकुमारके पास जा पहुँचा। वहाँ जातेही उसने सोचाकि चोरीका माल यहीं छोड़ देना चाहिए, नहीं तो मैं मारा जाऊँगा। अतः तुरन्त उसने वह आभूषणोंकी पेटी महाबल-कुमारके निकट रख दी, और उलटा-सीधा मार्ग ग्रहण कर वह जंगल में छिप गया।

किन्तु अचानक ही पेटी के गिरनेका शब्द सुनते ही ध्यानमें बैठे हुए महाबल ऋषिके नेत्र खुल गये और सामने एक सुन्दर पेटी दिखाई दी। उसे देखते ही उसके आनन्दकी

सीमा न रही। अवश्य ही परमात्माने प्रसन्न होकर मेरे लिए यह मूल्यवान भेट भेजी है, यह सोचकर उसने तुरन्त पेटी खोली; तो उसमें जगमगाते हुए रत्न-जड़ित सोनेके आभूषण दिखाई दिये। मोतियोंकी माला, हीरेका हार, पन्नेका कंठा देखते ही उसका मन विचलित हो गया और प्रसन्न चित्तसे मोतियोंकी माला उसने गलेमें पहनली। ठीक उसीसमय चोरको खोजतेहुए राजाके सिपाही वहाँ आ पहुँचे और चौरीके माल सहित महाबलकुमारको देखकर उन्होंने तुरन्त उसे पकड़ लिया। कर्मकी यह कैसी अद्भुत लीला है।

कर्म ही मनुष्यको क्षणभर में आनन्दका अनुभव कराते और दूसरे ही क्षण विषादमें फँसा देते हैं। महाबलकुमारकी भी यही गति हुई। पुलिसने उसे बुरीतरह सताया और हाथ-पाँवमें हथकड़ी-बेड़ी पहनाकर चोरीके माल-सहित महाराजाके सम्मुख उपस्थित करदिया।

महाबल तो यह सब देखकर अवाक् रह

गया। उसकी बुद्धि कुण्ठित हो गई। उसी क्षण उसे देववाणीकी स्मृति जाग्रत हुई।

उधर महाराजा भी अचानक चोरीके माल सहित महाबलकुमारको संन्यासीके वेषमें खड़ा देखकर चकित रह गये। संन्यासीके वेष में यह शैतानियत देखकर राजाकी क्रोधाग्नि भभक उठी।

किन्तु महाबलकुमारने और कुछ न कहकर यह श्लोक उच्चारण किया :—

"रक्ष्यते न भूपालै र्न देवै र्न च दानवैः।
नीयते वट शाखायां कर्म्मणाऽसौ महाबलः॥"

अर्थात्—न राजा रक्षा कर सकता है न कोई देव या दानव ही बचा सकता है। महाबलको उसके कर्म ही वट वृक्षकी शाखाकी ओर ले जा रहे हैं।

महाबल बार-बार यही श्लोक बोलतारहा, इससे राजा और भी चिढ़ गया। उसने समझा कि दण्डके भयसे ही यह ढोंग कर रहा है। फिर भी उसकी स्थितिसे द्रवित

हो राजाने स्नेहभावसे पूछा—"महाबल ! तेरा यह कैसा अयोग्य आचरण है ? एक ओर तेरे शरीर पर सुन्दर साधुका वेष दिखाई दे रहा है और दूसरी ओर तेरे मनमें कपट-चोरीकी भावना जागृत है ?"

महाबलने प्रत्युत्तरमें कहाकि—"राजन् ! इसमें कुछ भी अघटित या आश्चर्य जैसी बात नहीं है। कर्मकी कला नहीं जानी जा सकती। क्षण भरमें यदि वह राज-सिंहासन पर बिठा देती है, तो घड़ी भरमें वही राजाको भिक्षा माँगनेकी स्थितिमें पहुँचा देती है। अभी यदि उसे हाथी पर बैठानी है तो दूसरे ही क्षण वह गर्दभारूढ़ भी बना सकती है। कर्मबलसे महान् बलवान् भी निर्बल बन जाता है और अनेक रोग उसे ग्रसित कर लेते हैं। पलभरमें यदि वह हँसाती है तो तत्काल ही रुला भी देती है। यह सब कर्मकी ही लीला है।" इसके बाद फिर उसने "रक्ष्यते न भूपालैः" श्लोक पुनः उचारा। तब राजाने अपने

मनकी उलझन दूर करनेके लिए महाबलसे पूछा :—"हे कुमार! तूने किस लिए ऐसा अनुचित कार्य किया? मुझे सच-सच बतला। मेरा मन तो यही कहता है कि तूने ऐसा अनुचित कर्म किया हो, ऐसा मैं नहीं मानता। मेरे मनमें शंका हो रही है; अतः सच्ची बात क्या है, वह सब बतला दे। साथ ही तू जो श्लोक उच्चारण करता है, उसका आशय भी बतला।"

तब महाबलने अत्यन्त धैर्य धारण कर नगरसे बाहर जानेका कारण देव-द्वारा सुनी हुई भविष्यवाणी, अपनी आँखोंसे देखी हुई आश्चर्य कारक रानी और द्वारपालकी मृत्यु आदि अभी घटनाएँ विस्तारसे कह सुनाईं। इसके बाद फिर कहा कि "महाराज! कर्म किसीको नहीं छोड़ते। मैंने चोरी नहीं की; फिरभी मैं पकड़ा गया! और देवने मुझे यह भी कहा था कि इसी नगरके मध्यमें खड़े हुए वटवृक्षकी शाखासे लटककर तू छह मास

पश्चात् यमधामको प्रस्थान करेगा; अर्थात् तेरी मृत्यु हो जायगी।"

महाबलके मुखसे इस प्रकार अथसे इति पर्यन्त सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर राजा फिर आग-बबूला हो गया। वह भ्रकुटी चढ़ाकर दाँत पीसने लगा और क्रोध भरी वाणीमें बोला, "वह दुष्ट देव कौन है? मेरी रानीका घातक! अरे देव! तूने मेरी अनजाने दशामें यहाँ आकर यह अपकृत्य कर दिखाया इसमें तेरी कौनसी वीरता है? जरा मेरे सामने आकर खड़ा हो तो मैं भी देखलूँ कि तुझमें कितना पराक्रम है? मैं सीना तानकर तेरी खबर ले सकता हूँ। जरा मेरे सामने तो आ। देखता हूँ कि तू कैसे आता है? मैं खुली तलवारसे इस महाबलकी रक्षा करूँगा। देखता हूँ अब तेरी वीरता और भविष्यवाणीकी सत्यता कहाँतक चरितार्थ होती है?"

अबतो महाराजा महाबलको अपने प्रिय पुत्रकी तरह अपने ही महलमें रखते हुए स्वयं

उसकी रक्षा बड़ी सावधानीके साथ करने लगे।

राजाने गर्विष्ठ होकर कहा, "महाबल ! अब तू निर्भय हो जा। तू उस दुष्ट देवके मस्तक पर पाँव रखकर स्वेच्छासे क्रीड़ा कर।" इस प्रकार महाराजकी छत्रछायामें महाबल-कुमार आनन्द-प्रमोदमें अपने दिन व्यतीत करने लगा ; किन्तु फिर भी देवकी भविष्य-वाणी उसके अंतःकरणमें शूलकी तरह चुभती थी। वह वटवृक्ष और उसकी शाखा उसके दृष्टिपथमें प्रत्यक्ष यमराजके समान ही आकर उपस्थित हो जाती थी। एक दिन महाबलने महाराजसे प्रार्थना की कि "राजन् ! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो मुझे किसी दूर देशमें भेज दीजिये। जिससे कि दृष्टि विष-रूपी सर्प के समान यह वटवृक्षकी शाखा मेरी नजरसे दूर हो जाय।'

"अरे वत्स ! तू निर्भय रह। वह देव तेरा क्या बिगाड़ सकता है ? तू निःशंक होकर प्रिय भोगोंका उपभोगकर।" इस प्रकार जब

नरेन्द्रने उसे प्रोत्साहन ओर आश्वासनके साथ सात्वना दी; तब महाबलके चित्तको कुछ शान्ति हुई।

तत्पश्चात् वसंतोत्सव मनानेके लिए एक मंगल दिवस पर राजा-रानी राज-परिवार सहित अश्वारूढ़ होकर राज-उद्यानकी ओर पधारे। सबने नये-नये वस्त्राभूषण और शृङ्गार धारण किये। महाबलने भी गलेमें मोतीकी माला और हीरेका हार धारण किया एवं वह भी सबके साथ आनन्द एवं उमंगके साथ राजोद्यानमें जा पहुँचा, किन्तु वहाँ पहुँचनेके पश्चात् महाराजाके एक विशेष कार्यवश महाबल अश्वारूढ़ होकर पुनः नगरमें आया और महाराजाका बताया हुआ काम पूरा करके राजमहलसे वापस लौट पड़ा। आनन्द और आवेशके प्रवाहमें वह शीघ्रतासे राजोद्यानमें पहुँचना चाहता था। अतः त्वरितगतिसे अत्यन्त वेगके साथ वह अश्वको दौड़ा रहा था। उस समय उसे ध्यान नहीं रहा कि

मार्गमें वह दृष्टि विष सर्पके समान वटवृक्षकी शाखाकी आयेगी और मैं आज ही यमालयको प्रस्थान कर जाऊँगा। आज ही छह मासकी अवधि समाप्त हो रही थी। उसका घोड़ा पूर्ण वेगसे दौड़ रहा था। अचानक बीचमें जहाँ वटवृक्ष आता था; वहीं महाबलके कंठमें पहनी हुई मोतियोंकी माला उछलकर उस वटवृक्षकी शाखामें उलझ गई। मालाके शाखामें उलझते ही घोड़ा नीचेसे निकल गया और महाबल उस डालीमें लटक गया। इस प्रकार गलेमें फाँसी लगते ही तत्काल उसके प्राणपखेरू उड़ गये। यह घटना घटित होती देखते ही चारों ओरसे सहायता देनेको जनता दौड़ पड़ी, किन्तु इसके पहले ही महाबल तो कालरूपी व्याधका शिकार हो चुका था।

"अवश्यं भावि भावानां प्रतिकारो भवेद्यदि।
तदा वनं न गच्छेयुः नल राम युधिष्ठिराः॥"

अर्थात्—भावीभावको अन्यथा मिथ्या करनेकी शक्ति किसीमें भी नहीं है। वह

होकर ही रहती है। यदि उसका कोई प्रतिकार हो सकता तो राजा नल, राम और युधिष्ठिर को वनमें न जाना पड़ता। जिस मोतीकी माला और सोनेकी कंठीको देख-देखकर महाबल हर्षित होता था, उसी मालाने आज उसके प्राण लेलिये।

महाबलकी मृत्युका समाचार सुनकर महाराजाके दुःखकी सीमा न रही। वे विलाप करने लगे। अरे, अचानक ही महाबलकी मृत्यु कैसे हो गई? यह मेरी ही भूल है कि मैंने उसे अकेले ही नगरमें भेजा। सचमुच ही आज मेरा सम्पूर्ण गर्वगलित हो गया। मेरा अभिमान चूर हो गया। मैंने कैसी भूल की? यदि पहले से ही इस वटवृक्ष को जड़ से कटवा देता तो कितना अच्छा होता? अरे वत्स! मैंने तेरी दूरदेश में जाने की इच्छा पर भी ध्यान नहीं दिया। हाय, यह अचानक क्या हो गया! इस दैव ने मुझे ठग लिया! नहीं तो मेरे जैसा स्वामी होते हुए शस्त्रास्त्रों

के विद्यमान् रहते हुए भी काल ने तुझे अपना ग्रास बना लिया ! ओह; मेरा वह अभिमान कहाँ चला गया ? मेरा यह राजपद या स्वामित्व किधर विलीन हो गया ? इस प्रकार राजा को अत्यन्त पश्चात्ताप होने लगा। उसे विश्वास होगया कि 'मैं ही सबको सुखी-दुःखी करता हूँ और मैं ही गुणवान्, बलवान् सर्वथा बुद्धिमान् हूँ,इस प्रकार की मेरी धारणा और मिथ्या है।

राजा आर्द्र कंठ से विलाप करता है और उच्च भावना मन में लाते हुए आगे बढ़ता है। सचमुच आत्मा ही अपने शुभाशुभ कर्म के बल पर सुखी या दुःखी होती है। अपने किये हुए कर्मों का फल स्वतः ही भोगना पड़ता है और अवधि पूर्ण होते ही सबको चुपचाप जाना पड़ता है। अतएव हे चेतन ! शुभकर्म करने को प्रवृत्त हो। इस प्रकार इस निमित्त से ही महाराजा अपनी आत्मा को संबोधन कर सान्त्वना देने लगते हैं।

इधर मंत्रीगण महाबलके शरीरका चन्दन काठसे अग्निसंस्कार करते हैं। महाबल कुमारके विरहसे राजा शोकमग्न हो जाते हैं और सम्पूर्ण क्रीड़ाएँ स्थगितकर खिन्न चित्तसे राजमहलमें ही अन्तिम समय पूरा करते हैं।

अपरिचित स्थान

एक बार नन्दन वन में दो चारण महर्षियों के पधारनेका शुभ समाचार सुनकर महाराजा अपने मंत्रिगण सहित उनके दर्शनार्थ गये, तो महामुनिवरों के दर्शन-वन्दन से सब के रोमांच खड़े हो गये। सभी पुलकित हो गये।

करुणासिन्धु, अकारण बन्धु, गुरु महाराज ने उपदेशामृत का स्रोत प्रवाहित करते हुए कहा, महानुभावो! जीव स्वयं ही अपने शुभाशुभ कर्मों के प्रभाव से सुखी या दुःखी होता है। इसलिए सुख के इच्छुक तथा दुःखके विरोधी आत्माओं को शुभ कर्मों का संचय करना चाहिए। आलस्य और प्रमाद को दूर

हटाकर धर्म की आराधना में तन्मय हो जाना चाहिए; क्योंकि यह शरीर कब छूट जायगा अथवा कालरूपी व्याध कब अपने फन्देमें फँसा लेगा, यह नहीं कहा जा सकता। वह तो अचानक ही किसी अपरिचित स्थानसे आकर इसे उठा ले जायगा। वह काल रात या दिन, बालक या वृद्ध, रंक या रायका भेद न रखते और किसी की भी पर्वाह न करते हुए चाहे जिस अवस्थामें, चाहे जिस अपरिचित स्थानमें और चाहे जिस समय अचानक आकर न जाने किस अपरिचित स्थान में ले जायगा! उस समय हमारी कोई भी रक्षा नहीं कर सकता। अतः दीन मुख होकर सब कुछ यहीं छोड़ आत्मा को अकेले उसके साथ चल देना पड़ता है।

जिस छह खण्डके स्वामी ऐसे चक्रवर्तीकी हजारों देव रक्षा करते थे और लाखों सैनिक जिसकी आज्ञा में दिन रात खड़े रहते थे, वैद्य और हकीम रात दिन जिसकी सेवा के लिए उपस्थित रहते थे। वह नवनिधान और चौदह

रत्नों के स्वामी तथा पृथ्वी को कँपा देने वाले धरणीधर भी जब इस पृथ्वी पर लुढ़क गये, ढह पड़े तब हम किस गिनतीमें हो सकते हैं ? इसलिए समय रहते ही जागने की आवश्यकता है। जबतक आँखों में अँधापा नहीं आता और कान अच्छी तरह सुन सकते हैं, इन्द्रिय सतेज हैं। शरीर शिथिल नहीं हुआ है, उसके पहले ही कुछ करने की आवश्यकता है।

इस प्रकार गुरु महराज की अमृतमयी देशना श्रवण करने पर राजा विरागी बन जाता है और त्याग के पुनीत पंथ में प्रयाण कर आत्मा को उज्ज्वल बनाते हुए कर्मों को चूर्ण कर अक्षय सुख का भोक्ता बनता है।

यह कथा हमें बुरे व्यसनोंसे मुक्त होने तथा दुर्लभ मानव-जीवनको उज्ज्वल बनानेकी अनुठी प्रेरणा प्रदान करती है।

समाप्त

श्रीपाल-चरित्र

जैन साहित्यमें हमारे श्रीपाल-चरित्रके अनुसार अन्य किसी भाषामें ऐसा मनोरंजक चरित्र अबतक कहीं नहीं छपा। इसमें श्रीपाल कुमार का सम्पूर्ण चरित्र बड़ी ही सरल, सरस, सुन्दर और सुमधुर भाषामें उपन्यासके ढङ्गपर लिखा गया है, जो हर एक स्त्री, पुरुष और बालक-बालिकाओं के पढ़ने सुनने और समझने योग्य है। ऐसी सुन्दर शैलीसे लिखा गया है कि एक बार पढ़ना आरम्भ करने पर बिना खतम किये छोड़नेकी इच्छा ही नहीं होती। मनमोहक भावपूर्ण सोलह चित्र लगाकर पुस्तककी शोभा सौगुनी बढ़ा दी गयी है, जिन्हें देखने पर श्रीपाल कुमारका सारा चरित्र बायस्कोपकी तरह आँखों के सामने नाचने लगता है। अगर आज भारतमें छापाखाना न रहता तो केवल इसके एक चित्रका ही मूल्य एक अशर्फी रहता। इतना होनेपर भी इस अनुपम सर्वाङ्ग-सुन्दर सचित्र ग्रन्थ-रत्नका मूल्य सुनहरी रेशमी जिल्दका केवल ५॥) रु० रखा है। हम यह दावेके साथ कहते हैं कि आजतक आपने अन्य किसी भाषामें ऐसा सुन्दर श्रीपाल-चरित्र नहीं देखा होगा। हजार कामोंमें बचत कर इस सर्वाङ्ग-सुन्दर ग्रन्थ-रत्नको आज ही मँगवाइये। देर न कीजिये। डाक खर्च १॥)

पता : **पण्डित काशीनाथ जैन**

मु० पो० बम्बोरा, (उदयपुर-राजस्थान)

हमारी उत्तमोत्तम सरल सुन्दर सचित्र पुस्तकें

नेमिनाथ-चरित्र रेशमी जिल्द	१०)	चन्दनबाला	१.३८
आदिनाथ-चरित्र ,, ,,	९)	रतिसार कुमार	१.२५
शान्तिनाथ चरित्र ,, ,,	८)	राजा हरिश्चन्द्र	१.२५
पार्श्वनाथ-चरित्र ,, ,,	८)	पर्यूषणपर्वमाहात्म्य	१.२५
राजा श्रेणिक ,, ,,	७)	शीलवती	१.००
राजा सम्प्रति ,, ,,	७)	सुरसुन्दरी	१.००
चन्द्रराजा ,, ,,	७)	स्थूलभद्र मुनि	१.००
ख० ग० स० पञ्च प्रतिक्रमणसूत्र	६)	कलावती	.७५
श्रीपाल-चरित्र रेशमी जिल्द	५.५०	चम्पक सेठ	.७५
वीर अम्बड़ ,, ,,	४)	जय विजय	.७५
उत्तम कुमार ,, ,,	४)	राजर्षि प्रसन्नचन्द्र	.७५
राजा यशोधर ,, ,,	४)	सुदर्शन सेठ	.७५
वीरपाल चरित्र ,, ,,	४)	अञ्जनासुन्दरी	.७५
शुकराज कुमार ,, ,,	२)	कयवन्ना सेठ	.७५
नल-दमयन्ती	१.५०	विजयसेठ विजया सेठानी	.७५
राजा-प्रियंकर	१.५०	रत्नसार कुमार	.७५
जम्बूस्वामी	१.५०	तेरह काठिये	.७५
हरिबल मच्छी	१.५०	ललितांग कुमार	.७५
मुनिपति-चरित्र	१.५०	सती सीता	.७५
अभय कुमार	१.५०	सती राजीमती	.७५
काम-कुम्भ माहात्म्य	१.५०	मन्त्रीश्वर कल्पक	.७५
		कार्तिक पूर्णिमा	.७५

सती द्रौपदी	·६३	नूपुर पण्डित	·५०
महाबल कुमार	·६३	होलिका पर्व	·५०
अरणिक मुनि	·५०	कामदेव श्रावक	·५०
आनन्द श्रावक	·५०	लकड़हारा	·५०
नमस्कार मन्त्र माहात्म्य	·५०	रत्नशिखर	·५०
कूर्मापुत्र	·५०	महासती मृगावती	·५०
इलाची कुमार	·५०	सुरादेव श्रावक	·३८
महाशतक श्रावक	·५०	नन्दिनीप्रिय श्रावक	·३८
माता देवानन्दा	·५०	अतिमुक्त कुमार	·३८
ब्राह्मी-सुन्दरी	·५०	ज्ञान पञ्चमी माहात्म्य	·३८
		कुण्डकोलिक श्रावक	·२५

प्रकाशित होनेवाली पुस्तकें

तरंगवती तरंगलोला—	प्रेसमें	मेघकुमार चरित्र—	प्रेसमें
भरतेश्वर बाहुबली—	प्रेसमें	अमर कुमार (नाटक)—	प्रेसमें
अनाथी मुनि—	प्रेसमें	देवद्रव्य —	प्रेसमें
हरिकेशी बल—	प्रेसमें	समरादित्य चरित्र—	प्रेसमें
मुनि सुव्रतस्वामी—	प्रेसमें	आर्द्रकुमार—	प्रेसमें
तिलक मंजरी—	प्रेसमें	आचार्य हेमचन्द्र—	प्रेसमें
षट् पुरुष चरित्र—	प्रेसमें	बालमुनि मनक—	प्रेसमें
मामक राज चरित्र—	प्रेसमें	विमलशाह	प्रेसमें
कालक कुमार—	प्रेसमें	चिलाती पुत्र—	प्रेसमें
मिथिलापति नमीराज—	प्रेसमें	आचार्य स्कन्दक—	प्रेसमें

पता—पण्डित काशीनाथ जैन,

पो० बम्बोरा (उदयपुर राजस्थान)